International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 04-12-2018; Accepted: 07-01-2019
www.socialsciencejournal.in
Volume 5; Issue 1; January 2019; Page No. 71-73

स्वाधीनता आन्दोलन और उग्रवादी विचारधारा का विशलेषणात्मक अध्ययन

डॉ0 श्याम नारायन
सहायक प्राध्यापक राजनीतिशास्त्र, किशनु बाबू शिवहरे महाविद्यालय, सिसोलर जिला, हमीरपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र स्वाधीनता आन्दोलन और उग्रवादी विचारधारा का विशलेषणात्मक अध्ययन पर आधारित है। उग्रवादियों के चिंतन का एक महत्वपूर्ण पहलू राष्ट्र की सामूहिक स्वतंत्रता का आग्रह था। वे सामूहिक स्वतंत्रता को वैयाक्तिक स्वतंत्रता से पृथक मानते थे। उग्रवाद 1916 से 1919 तक भारतीय राजनीति में केन्द्रीय स्थान बनाये रहा, उसके बाद गाँधी जी के भारतीय राजनीति में आने से एक समन्वयकारी युग का उद्भव हुआ। उग्रवाद तथा आंतकवाद समाप्त नहीं हुआ वरन् समय–समय पर आवश्यकता पड़ने से राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम को शक्ति प्रदान करते रहे। उग्रवाद का रूप समय तथा परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहा, किन्तु लाल बाल पाल तथा अरविंद घोष ने कभी भी हिंसा तथा क्रांति को महत्व नही दिया।
उदारवाद तथा उग्रवाद दोनों में विरोध होते हुए भी उद्देश्य की दृष्टि से दोनों एक थे। दोनों ही देशप्रेम एवं राष्ट्रीयता से ओत–प्रोत थे। एक–दूसरे के लक्ष्य परस्पर पूरक थे। एक का क्षेत्र वाणी था तो दूसरे का क्षेत्र कर्म था। कांग्रेस के सम्पूर्ण इतिहास में बने दलों के नाम तथा तरीकों के आधार दो विचारधाराओं के दर्शन होते हैं। एक विचारधारा को मानने वाले ने भारत के लिए स्वशासन तथा स्वभाग्य निर्धारण के ध्येय को अपनाया, जिसका दर्शन ब्रिटिश उदारवादियों जैसा रहा है, जिसे दक्षिणपंथी विचारधारा कहा जा सकता है। दूसरी विचारधारा का लक्ष्य स्वराज्य प्राप्ति का रहा है, इसका झुकाव सीधी कार्यवाही की ओर रहा है।

मूल शब्द : स्वाधीनता आन्दोलन, उदारवाद, उग्रवाद, विचारधारा।

1. प्रस्तावना
भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के अगले चरण को उग्रवादी आन्दोलन के नाम से अभिप्रेत किया गया। उदारवादी, मित्वादी या नरमपंथी विचारधारा का प्रभाव तो वैसे 1905 तक तथा कुछ सीमा तक उसके बाद भी रहा किन्तु 19वीं सदी के अन्त तथा 20वीं दी के प्रारंभ में कुछ ऐसी घटनायें घटी, जिनके कारण मितवादी विचारधारा के स्थान पर उग्रवादी विचारधारा का उद्भव हुआ। कांग्रेस नेतृत्व की आवेदन–निवेदन की नीति में निमग्नता ने देश और स्वयं कांग्रेस के अन्दर एक प्रकार से असंतोष पैदा कर दिया। बहुत से कार्यकर्ताओं ने देखा और महसूस किया कि आवेदन–निवेदन तथा ब्रिटेन में मात्र प्रचार से कुछ हासिल होने वाला नहीं है। फलतः यथार्थ के फलक पर दृष्टिपात करने वालों के अनुभव के फलस्वरूप देश की राजनीति में एक नवीन विचारधारा का उद्भव हुआ, जिसे उग्रवादी विचारधारा के नाम से जाना गया।[1]
कांग्रेस के अन्दर आवाजें उठने लगी कि संवैधानिक तरीकों से स्वाधीनता के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। तिलक तथा अरविंद घोष जैसे प्रमुख उग्रवादी नेताओं ने कांग्रेस की तीखी आलोचना की, दामोदर हरि चाफकर बन्धु ने कांग्रेस को लताड़ते हुए कहा कि कांग्रेसी नेता सिर्फ वाग्वीर हैं। रवीन्द्र नाथ ठाकुर, स्वामी विवेकानन्द तथा स्वामी श्रद्धानंद ने भी कांग्रेस को आड़े हाथों लिया। इन देशभक्तों ने कहा कि रानाडे के समाज सुधार आन्दोलन से कुछ होने वाला नहीं है।
प्रो.के. सुन्दर रमन अय्यर ने भी 1903 के कांग्रेस अधिवेशन में भाग लिया। उन्होंने भी कांग्रेस की नीति के दोष उजागर करते हुए कहा कि कांग्रेस अपने को राष्ट्रीय कहती है किन्तु वह है नहीं। उसमें विदेशी प्रभुत्व को उखाड़ फेंकने की क्षमता नहीं है। वह पूरी तरह एक राजभक्त संस्था है, जिसे तैयार कर लैंसडाउन जैसे वायसराय ने खुद स्वीकार किया है। भारत में कांग्रेस पार्टी के अन्दर राजनीतिक क्रांति के लिए कोई जगह नहीं है। इस तरह से कहा जा सकता है कांग्रेस–नेतृत्व की नीतियों में कमी के कारण उग्रवाद अस्तित्व में आया। यही उग्रवादी राष्ट्रवादी या नेशनलिस्ट कहलाया। गोखले और उनके समर्थक माडरेट कहलाये। राष्ट्रवादियों के नेता थे – बाल गंगाधर तिलक, विपिन चन्द्रपाल, अरविंद घोष तथा लाला लाजपत राय। कांग्रेस से बाहर होकर उग्रवाद माध्यमवर्गीय क्रांतिवाद के रूप में जाना गया। राष्ट्रवादी मितवादियों से राजनीतिक विचारों में जितना आगे थे, वे सामाजिक विचारों में उतना ही पीछे थे। यदि दोनों विचारों को लेकर एक नव नेतृत्व अस्तित्व में आया होता तो देश स्वाधीनता एवं समाजवाद के क्षेत्र में बहुत तेजी के साथ आगे बढ़ता।[2]
राष्ट्रवादी सामाजिक विचारों में बहुत पुरातन, पंथी थे, इसकी एक झलक के लिए प्रमुख उग्रवादी नेता तिलक की एक सोच का साक्ष्य पर्याप्त है। 1890 में जब लड़कियों की वैवाहिक उम्र को 10 से बढ़ाकर 12 वर्ष किया गया तो तिलक ने इस सुधार का पुरजोर विरोध किया। माडरेटों के राजनीतिक विचारों के दौर्बल्य का एक प्रमुख कारण अंग्रेजी शिक्षा एवं पश्चिम का प्रभाव था।
नेशनलिस्टों ने माडरेटों पर पाश्चात्य प्रभाव को दूर करने के लिए देश में आधार की खोज के रूप में धार्मिक उत्सवों पर जोर दिया। तिलक ने महाराष्ट्र में शिवाजी तथा गणेश उत्सव प्रारंभ किया। बंगाल में काली उत्सव प्रारंभ हुआ, इसके फलस्वरूप ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को फूट डालो और राज करों का अवसर प्राप्त हो गया। गोरों ने मुसलमानों को राष्ट्रीय आन्दोलन के विरुद्ध भड़काया।
बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय, विपिन चंद पाल तथा अरविन्द घोष जैसे प्रमुख उग्रवादी नेताओं या नेशनलिस्टों ने भारतीय राजनीति को एक नई दिशा प्रदान की। इन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन की रागिनी को नया स्वर प्रदान किया। उदारवदी नेताओं की नयी नीति का स्थान राष्ट्रीय आन्दोलन तथा क्रांति की मांग ने ले लिया। ये नेता उग्रवादी कहलाने लगे क्योंकि इनका दृष्टिकोण उदार अथवा सुधारवादी न होकर क्रांतिकारी था। ये ब्रिटिश साम्राज्य के घोर विरोधी थे। इन नेशनलिस्टों का विचार था कि अंग्रेजो से अनुनय–विनय तथा प्रार्थना करने से कभी भी स्वतंत्रता प्राप्त नही होगी। स्वतंत्रता भीख माँगने से नहीं लड़कर हासिल की जाती है। उसके लिए उन्होंने स्वावलम्बन, संगठन तथा संघर्ष की आवश्यकता पर बल दिया।

तिलक ने कहा कि अपने उद्देश्यों से नही बल्कि अपने तरीकों, तेवरों, पद्धति से उनके दल ने उग्रवादी नाम प्राप्त किया है। उग्रवादियों का भी वही उद्देश्य था जो नरमपंथियों का था। उग्रवादी भी ब्रिटिश शासन को समूल उखाड़ फेंकने के पक्ष में नहीं थे किन्तु वे चाहते थे कि देश के प्रशासन में लोगों को भाग लेने की व्यापक शक्ति मिले, साथ ही उग्रवादियों की सोच यह थी कि नौकरशाही पर दबाव डाला जाये जिसके आधार पर वह यह अनुभव करे कि सब कुछ ठीक–ठाक ढंग से नहीं चल रहा है।

तिलक के अलावा अन्य उग्रवादी नेताओं ने भी इस प्रकार के विचार व्यक्त किये। लाला लाजपतराय ने भी इस बात को लेकर नरमपंथियों की आलोचना की कि वे ब्रिटिश राष्ट्र से प्रार्थना की भाषा में बात करते थ उनका कहना था कि प्रार्थना तो हमें अपने लोगो तथा भगवान से करनी है, विदेशी हुकूमत से नहीं। अरविंद घोष को भी नरमपंथियों की पद्धति पर विश्वास नहीं था। लाल–बाल–पाल आदि राष्ट्रवादियों ने उग्रवादियों को अर्थ निरूपण किया। उग्रवादियों को उनकी पद्धति के आधारपर तीन वर्गो में बांटा गया था –

1. क्रांतिकारी
2. वे व्यक्ति जो क्रांतिकारियों के प्रति सहानुभूति रखते थे, साथ ही गुप्त रूप से उनकी मदद करते थे।
3. विदेशी प्रभुत्व से मुक्ति चाहते थे किन्तु हिंसात्मक पद्धति के विरोधी थे।

उदरावाद की तरह उग्रवाद भी दो विचारधाराओं में विकसित हुआ

1. उग्रवाद
2. क्रांतिकारी

दोनों विचारधाराओं में मौलिक सभ्यता थी, दोनों का एक लक्ष्य था – ब्रिटिश शासन से मुक्त पूर्ण स्वराज्य की स्थापना। उग्रवादी अशांतिपूर्ण तथा सक्रिय साधनों में विश्वास करते थे। उग्रवादियों का आतंकवाद पर विश्वास नहीं था। क्रांतिकारी हिंसा तथा आतंक में विश्वास करते थे।

2. उग्रवादियों की विचारधारा

उग्रवाद ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति क्रांतिकारी भावना का प्रतीक तो था ही, साथ ही वह भारतीय राष्ट्रीयता की उदारवादी प्रवृत्ति और सुधारवादी नेताओं के विरुद्ध भी एक प्रकार से शंखनाद था। कांग्रेस के 1904, 1905 तथा 1906 के अधिवेशन में सांविधानिक सुधारों की आवश्यकता पर बल दिया। कांग्रेस ने यह भी मांग की कि विधान परिषदोंकी शीघ्र ही विस्तार किया जाये ताकि जनता को उसमें सही अर्थो में प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। उग्रवादियों ने स्वदेशी तथा बहिष्कार आन्दोलन प्रारंभ किया, जिससे सांविधानिक विकास के इतिहास को एक नया आयाम मिला। उग्रवादियों की विचारधारा को इस प्रकार स्पष्ट कियाजा सकता है[3]

1. एक राजनीतिक आन्दोलन को खड़ा करना।
2. उग्रवादियों का उद्देश्य केवल कुछ बिन्दुओं तक सीमित नही था अपितु वे देश के प्रशासन में भारतियों की अधिक सहभागिता चाहते थे, साथ ही वे ब्रिटेन द्वारा किये जा रहे भारतियों के शोषण के समाप्त के पक्ष में थे। इस तरह उग्रवादी देश की विषम समस्याओं का निदान चाहते थे।
3. इन विषम और बड़ी समस्याओं को दूर करने के उद्देश्य से वे राजनीतिक आन्दोलन चला रहे थे। वे स्वराज्य के लिए जनता में उत्साह उत्पन्न कर रहे थे।

उग्रवादियों का आन्दोलन अधोलिखित तकनीक पर आधारित था–

- भारत के गौरवशाली अतीत से जनता को अवगत कराना।
- लोगों में धार्मिक प्रेरणा पैदा करना।
- राष्ट्रीय शिक्षा का पुर्नगठन।
- विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार तथा स्वदेशी वस्तुओं को प्रोत्साहन।
- राजनीतिक क्षेत्र में ब्रिटिश शासन का असहयोग, आवश्यकता पड़ने पर निष्क्रिय प्रतिरोध का सहारा।
- भारतीय भाषाओं तथा परम्पराओं के व्यापक प्रयोग पर बल तथा आन्दोलन के आधार के रूप में अंगीकार।

उग्रवादियों के राजनीतिक दर्शन ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के आधारभूत पहलुओं पर प्रभावी छाप छोड़ी।

3. उग्रवादियों की पद्धति

उग्रवादियों का लक्ष्य स्वराज्य की प्राप्ति था। तिलक का स्पष्ट कथन था कि "स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है, मैं इसे लेकर रहूँगा।" उग्रवादियों की सोच थी कि भारतीय संस्कृति एवं परम्पराओं के आधार पर शासन संस्थाओं का निर्माण हों। वे उदारवादियों की पद्धति को प्रभावहीन मानते हुए सक्रिय विरोध की नीति को अपनाकर भारत के लिए एक स्वतंत्र राष्ट्रीय सरकार का निर्माण चाहते थे। उग्रवादी स्वराज्य को केवल राजनीतिक ही नही अपितु नैतिक तथा धार्मिक आवश्यकता भी मानते थे। उसे प्राप्त करना वे अपना मूल उद्देश्य घोषित किये थे। उग्रवादियों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के सक्रिय प्रतिकार पर अपने को केन्द्रित किया। वे यह मानते थे कि भारत तथा ब्रिटेन में सम्बन्ध बेर–केर का है। वे यह भी जानते थे कि ब्रिटेन के साथ सहयोग करना भारतीय हित में नही है। उदारवादियों की अपेक्षा उग्रवादी यह मानते थे कि राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ब्रिटिश साम्राज्य का खुला विरोध आवश्यक है।

उग्रवादियों का मानना था कि राजनीतिक भिक्षावृत्ति तथा ब्रिटिश कृपा की अपेक्षा भारतीय अपने ऊपर भरोसाा रखें तो बेहतर होगा। उनकी पद्धति को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है–

4. अवज्ञा की नीति

उग्रवादियों ने अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अवज्ञा नीति अपनायी। तिलक का मानना था कि रानीतिक अधिकारों के लिए लड़ना पड़ेगा। उदारवादी सोचते थे कि वे अधिकार आवेदन–निवेदन से प्राप्त हो सकते है किन्तु उग्रवादियों की सोच थी कि दबाव की राजनीति से ही राजनीतिक लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। एक प्रमुख उग्रवादी नेता विपिन चन्द्र पाल का विचार था कि यदि सरकार स्वतः स्वराज्य दान करें तो मैं उसे धन्यवाद करने के बाद स्वीकार नहीं करूंगा जब तक कि मैं उसे स्वयं प्राप्त न कर लूँ।

उग्रवादियों का संगठन–शक्ति और आत्मनिर्भरता पर अधिक बल था। वे जन चेतना को जगाकर राजनीतिक आन्दोलन के माध्यम से ब्रिटिश सत्ता पर दबाव डालकर राजनीतिक लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते थे। मातृभूमि के प्रति कष्ट सहिष्णु होना, त्याग तथा आत्मनिर्भरता उग्रवादियों की प्रमुख कार्य पद्धति थी। लाला लाजपतराय का कहना था कि एक अंग्रेज सबसे अधिक घृणा भिखारी से करता है। मेरी सोच है कि भिखारी भी इसी का पत्र भी होता है आइये, हम सब दिखा दें कि हम भिखारी नहीं हैं। विपिन चन्द्र भी यही चाहते थे कि हम इतने सशक्त एवं प्रभावी हों कि हमारे विरुद्ध जो भी हो, वह झुकने के लिए विवश हो जायें। तिलक ने स्पष्ट कहा कि विदेशी शासन एक अभिशाप है, नौकरशाही की नींव हिलाने के लिए आत्मनिर्भरता तथा कार्य की स्वतंत्रता बहुत आवश्यक है।

5. सक्रिय विरोध और सत्याग्रह

लाल लाजपतराय ने सक्रिय विरोध के दो प्रमुख लक्षण बताये थे –

1. भारतीयों ने दिलो–दिमाग से ब्रिटिश शासन की शक्ति सम्पन्नता तथा परोपकार की भावना को खत्म कर दिया जाये।

2. देशवासियों के मन में स्वतंत्रता के लिए प्रेम तथा कष्ट सहन करने की भावना जागृत की जाये। उग्रवादियों ने राष्ट्र के समक्ष सहयोग के स्थान पर सक्रिय प्रतिरोध का कार्यक्रम रखा, उनके इस कार्यक्रम में बहिष्कार, स्वदेशी तथा शिक्षा शामिल थी। स्वदेशी से उनका आशय स्वदेशी वस्तुओं, स्वदेशी सरकार तथा स्वदेशी व्यवस्था की स्थापना से था। आर्थिक बहिष्कार को लेकर आन्दोलनकारियों में मतभेद था।

कुछ मितवादियों के अनुसार अपने प्रान्त बंग–भंग के विरुद्ध बंगवासियों की घृणा एवं क्रोध का यह परिचायक मात्र था। कुछ दूसरों का मानना था कि विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार देश के औद्योगिक विकास को एक नई गति देगा। कुछ राष्ट्रधर्मियों ने स्वदेशी माल के उत्पादन का तो समर्थन किया किन्तु बहुत से आन्दोलनकारियों का यह मानना था कि बहिष्कार एक प्रभावी राजनीतिक अस्त्र है, जो विदेशी शासको से मुक्ति तथा आन्दोलन को अग्रसर करने में मददगार होगा।

6. राष्ट्रीय शिक्षा

उग्रवादियों के साधनों में एक प्रमुख साधन राष्ट्रीय शिक्षा भी थी। उग्रवादियों ने इसे कई रूपों में विवेचित किया। पाल का कहना था कि राष्ट्रीय शिक्षा वह शिक्षा है जो राष्ट्रीय रूप रेखाओं के आधार पर संचालित की जाये, जो राष्ट्र के प्रतिनिधियों द्वारा नियंत्रित हों, जो इस प्रकार नियंत्रित तथा संचालित हों कि जिसके द्वारा राष्ट्रीय भाग्य की प्राप्ति का लक्ष्य पूर्ण हो सके।

अरविंद घोष का मत था कि राष्ट्रीय शिक्षा वह है जो हमे अतीत का महानता का पाठ पढ़ाये, वर्तमान का पूरी तरह से सदुपयोग की शिक्षा देता ताकि एक महान राष्ट्र का निर्माण किया जा सके। अरविन्द घोष वस्तुतः पूरब और पश्चिम के आदर्श के समन्वय के आकांक्षी थे। राष्ट्रीय शिक्षा की अवधारणा को प्रचुर समर्थन प्राप्त हुआ। बहिष्कार स्वदेशी आन्दोलन और राष्ट्रीय शिक्षा ब्रिटिश शासन के प्रति निर्भीक विरोध के प्रमुख स्तम्भ थे। अरविन्द घोष ने राष्ट्रीयता को धर्म की संज्ञा प्रदान की थी। उग्रवादी नेताओं ने गौरवशाली अतीत की स्मृतियों को पुर्नजीवित किया था।

तिलक ने महाराष्ट्र में शिवाजी तथा गणपति महोत्सव के माध्यम से देशावासियों को जगाने, उनमें आत्मबल, उद्‌भूत करने तथा संगठन को प्रभावी बनाने का महत् प्रयास किया।

उग्रवादी भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को व्यापक बनाने में कामयाब रहे। उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन से मध्यम वर्ग को जोड़ा। जनसाधारण में राष्ट्रीय चेतना को जगाया। इस संदर्भ में लाला लाजपतराय के विचार को रेखांकित करना उपयुक्त होगा। उन्होंने कहा था कि हम सरकारी भवनों से अपने मुखों को हटाकर जनताकी झोपड़ियों की ओर फेरना चाहते है। सरकार से अपील के सम्बन्ध में जनता के मुखो को खोलना चाहते हैं। कांग्रेस के अन्दर रहकर उग्रवादियों ने यह प्रयास किया कि संगठन का रुख ब्रिटिश सरकार के प्रति बदले। उनका मत था कि वह उग्र विरोध करें तथा आत्मनिर्भरता की नीति अपनायें। उनके प्रयासों के फलस्वरूप ही कांग्रेस ने बहिष्कार तथा स्वदेशी को स्वीकारकिया। ब्रिटिश शासन ने उग्रवादियों को देश निकाला का दण्ड दिया तथा उनके प्रति कठोर दमन नीति अपनायी किन्तु उस राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचला नहीं जा सकता। दमनकारी नीति का नतीजा यह निकला कि राष्ट्रीय आन्दोलन ने क्रांति का रूप धारण कर लिया। इस तरह से यह कहा जा सकता है कि लगभग डेढ़ दशक के उग्रवादी आन्दोलन ने भारत के प्राप्य (आजादी) को एक नई दिशा प्रदान की।

7. निष्कर्ष

उग्रवादी आन्दोलन मितवादी आन्दोलन से भिन्न एक अलग विचारधारा थी। इस विचारधारा के अग्रसारण में लाल–बाल–पाल तथा अरविंद घोष का प्रमुख योगदान था। यह विचारधारा को मानने वालों का उदारवादी कार्य पद्धति में विश्वास नहीं था। उग्रवादी आन्दोलन निवेदन को प्रभावी नहीं मानते थे। वे इसे राजनीतिक भिक्षावृति की संज्ञा प्रदान करते थे। उग्रवादी नेताओं ने स्वदेशी, बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षा को अपने मिशन का आधार बनाया। तिलक उग्रवादी आन्दोलन के मूल अगुवाकार थे। उन्होंने स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है, मैं इसे लेकर ही रहूँगा जैसा मंत्रघोष देशवासियों को प्रदान किया। उनके इस उद्‌घोष से देश की युवापीढ़ी को नवोन्मेष प्राप्त हुआ। महाराष्ट्र में शिवाजी तथा गणपति उत्सव संचालित कर तिलक ने युवाओं को राष्ट्रीय धारा से जोड़ने का प्रयास किया। उन्होंने निष्क्रिय प्रतिरोध की पद्धति अपनायी। लाला लाजपतराय, विपिन चन्द्र पाल तथा अरविंद घोष ने तिलक का कन्धे से कन्धा मिलाकर साथ दिया। 1906 से 1919 तक के काल में उग्रवादी आन्दोलन से राष्ट्रीय आन्दोलन के एक नया आयाम मिला।

8. सन्दर्भ

1. अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, नई दिल्ली, मैक मिल. इण्डिया लि., 1997, पृ. 1571.
2. सूरजनारायाण मुंशी, स्वतंत्रता के मार्गदर्शक दादाभाई नौरोजी, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, 1996, पृ. 38, 39
3. डॉ. अमरेश्वर एवं रामकुमार अवस्थी, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, जयपुर रिसर्च प्रकाशन, 1997, पृ. 237–238.